ज्योतिष ग्रन्थों का काल-निर्णय

-अरुण कुमार उपाध्याय, भुवनेश्वर

सारांश-वैदिक ज्ञान परम्परा की उत्पत्ति स्वायम्भुव मनु से मानी जाती है, जो मनुष्य रूप में मुख्य ब्रह्मा थे। उनका काल पुराणों में कलि आरम्भ ३१०२ ईपू. से २६,००० वर्ष पूर्व कहा है। बहुत काल बाद वैवस्वत मनु से १२,००० वर्ष की चतुर्युगी व्यवस्था आरम्भ हुई। इन कालों में वेद शाखाओं के ब्रह्म और आदित्य सम्प्रदाय आरम्भ हुए। इसी अनुरूप ज्योतिष में भी पितामह (स्वायम्भुव मनु) तथा सूर्य (वैवस्वत मनु के पिता विवस्वान्) सिद्धान्त परम्परा आरम्भ हुई। दोनों प्राचीन परम्परायें दक्षिण में तथा नवीन परम्परायें उत्तर भारत में प्रचलित हैं। ज्योतिष का आरम्भ स्वायम्भुव मनु के पूर्व हो चुका था तभी वेद में ७ लोकों का माप सहित वर्णन सम्भव हुआ। उस अर्थ में वेदाङ्ग ज्योतिष की पुस्तक उपलब्ध नहीं है। ब्रह्मा के काल में अभिजित् नक्षत्र से वर्ष आरम्भ होता था तथा चान्द्र मास का नाम पूर्णिमा के चान्द्र नक्षत्र के आधार पर था। कार्त्तिकेय काल में अभिजित नक्षत्र के पतन के बाद धनिष्ठा से वर्ष आरम्भ होने लगा। दोनों में माग मास से वर्ष का आरम्भ होता था, जो वर्तमान उपलब्ध वेदाङ्ग ज्योतिष में है। विवस्वान् या सूर्य के समय सूर्य सिद्धान्त आरम्भ हुआ, जिसका संशोधन रोमक पत्तन (मोरक्को के पश्चिम समुद्र तट) में मय असुर ने किया। कलि आरम्भ के समय पराशर ने इसका संशोधन किया जिसका अंश मैत्रेय को उपदेश रूप में विष्णु पुराण में उपलब्ध है। उसे पराशर मत भी कहा गया। उसके कुछ समय बाद ३६० कलि में आर्यभट ने पितामह सिद्धान्त को संशोधित कर उसे आर्य सिद्धान्त कहा। बाद में ६१२ ईपू. के शक के आधार पर विक्रमादित्य काल में वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त ने गणनायें कीं। वराहमिहिर ने पञ्चसिद्धान्तिका में उस समय उपलब्ध ५ सिद्धान्तों का उल्लेख किया, तथा सूर्य सिद्धान्त को शुद्ध स्वीकार किया जिसके आधार पर विक्रम संवत् प्रचलित हुआ। ब्रह्मगुप्त ने ब्रह्मा के सिद्धान्त की व्याख्या के लिए ब्राह्म-स्फुट सिद्धान्त लिखा जो सूर्य सिद्धान्त परम्परा की ही व्याख्या है। इसके आधार पर अरब में हिजरी सन् की गणना हुई जिसके कारण इसका अनुवाद अल-जबर (= ब्रह्म) उल-मुकाबला (स्फुट-सिद्धान्त) नाम से हुआ। अल-जबर से बीजगणित का नाम अलजब्रा हुआ। आर्यभट परम्परा के अन्य मुख्य ग्रन्थ हैं-लल्ल तथा वटेश्वर के ग्रन्थ। सूर्य सिद्धान्त परम्परा के मुख्य ग्रन्थ हैं भास्कर प्रथम तथा भास्कर द्वितीय। भास्कर द्वितीय का जन्म ११४८ ई मानते हैं, पर १००० ई. में अल-बरूनी ने इन्स्को २५६ वर्ष पूर्व का कहा है।

१. वैदिक सम्प्रदाय-वेद शाखाओं के २ सम्प्रदाय प्रचलित हैं-ब्रह्मा से ब्रह्म सम्प्रदाय तथा विवस्वान् (आदित्य या सूर्य) से आदित्य सप्रदाय। ब्रह्म सम्प्रदाय में कृष्ण यजुर्वेद की ८६ शाखाओं का वर्णन है जिनका प्रचलन पूरे विश्व में था। केवल पुष्कर द्वीप में नहीं था जहां के हिरण्याक्ष ने वेदों को नष्ट कर दिया था (शौनक का चरण व्यूह)। इसकी तैत्तिरीय शाखा मुख्यतः दक्षिण भारत में प्रचलित थी। आदित्य सम्प्रदाय का विकास योगी याज्ञवल्क्य के काल में हुआ, जिनके बारे में वर्णन है कि उन्होंने सूर्य से ज्ञान प्राप्त किया था (ब्रह्माण्ड पुराण, १/२/३५, वायु पुराण, ६१/१७, स्कन्द पुराण, ६/१२९, २७८)। आदित्य सम्प्रदाय में शुक्ल यजुर्वेद की १५ शाखाओं का विस्तार केवल भारत में ही था। याज्ञवल्क्य (प्रायः ४-५,००० वर्ष ईपू) के समय से वेद प्रचलन केवल भारत में ही रह गया।

इसी प्रकार ज्योतिष में भी ब्रह्मा के समय पितामह या आर्य सिद्धान्त प्रचलित हुआ। विवस्वान् के समय सूर्य सिद्धान्त प्रचलित हुआ। इनके पिता वैवस्वत मनु थे। कृष्ण द्वैपायन (२८वें व्यास) के काल (३१०२ ईपू में कलि आरम्भ) में स्वायम्भुव मनु से २६,००० वर्ष बीत चुके थे जिसे ऐतिहासिक मन्वन्तर कहा गया है। इसमें ७१ युग थे जो प्रायः ३६० वर्ष के थे। यह ऐतिहासिक परिवर्तन काल है, जिसे परिवर्त युग या दिव्य वर्ष भी कहा गया है। वैवस्वत मनु तक प्रायः ४३ युग तथा उसके बाद कलि आरम्भ तक २८ युग बीते थे। [१] मनुष्य रूप में ७ सावर्णि मनु भी वैवस्वत मनु तक के ७ मनुओं के ही परिवार से थे, जिनका काल भी इसी युग में है। यदि स्वायम्भुव मनु काल की समाप्ति २६,००० कलि पूर्व मानें तो सभी मनु काल समान मानने पर उनका काल है-

क्रम	मनु	सावर्णि मनु	काल (ईपू)
१	स्वायम्भुव	इन्द्र	३३१०२-२९१०२
२	स्वारोचिष	देव	२९१०२-२६०६२
३	उत्तम	रुद्र	२६०६२-२३०२२
४	तामस	धर्म	२३०२२-१९९८२

५	रैवत	ब्रह्म	१९९८२-१६९४२
६	चाक्षुष	दक्ष	१६९४२-१३९०२
७	वैवस्वत	मेरु	१३९०२-८५७६

प्राचीन ब्रह्म सम्प्रदाय में कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा या ज्योतिष में पितामह सिद्धान्त दक्षिण भारत में ही प्रचलित थे। सूर्य सिद्धान्त मत उत्तर भारत में प्रचलित था। दोनों परम्पराओं में दीर्घकालिक परिवर्तनों के कारण कई बार संशोधन हुए।

२. ब्रह्मा पूर्व का ज्योतिष- ब्रह्मा के पूर्व ३ युगों का वर्णन है-(१) अन्धकार युग के विषय में अधिक ज्ञात नहीं है (मनु स्मृति, १/५)

(२) आदि कृत युग (६१,९०२-५७,१०२ ईपू)-इस समय से ऐतिहासिक चतुर्युग गणना आरम्भ हुई। ब्रह्माब्द को २४,००० वर्ष माना गया है- प्रथम अर्ध भाग में १२,००० वर्ष का अवसर्पिणी युग है जिसमें क्रम से ४,३,२,१ मान के सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि आते हैं। इसके बाद १२,००० वर्ष के उत्सर्पिणी में विपरीत क्रम से ये युग खण्ड हैं। अभी ब्रह्माब्द का तृतीय दिन चल रहा है, जिसका कलि ३१०२ ईपू में आरम्भ हुआ, अर्थात् सत्य युग का आरम्भ १३९०२ ईपू (३१०२ + २४०० + ३६०० + ४८००) में हुआ। इस गणना से प्रथम युग का आरम्भ ६१९०२ ईपू में हुआ (१३९०२ + २ x २४,०००)। [२]

वेद में भी ३ युग पूर्व ओषधि उत्पत्ति का वर्णन है।[३]

(३) मणिजा युग (५७१०२-४५,१०२ ईपू)-प्रथम चक्र के अवसर्पिणी त्रेता से उत्सर्पिणी सत्ययुग तक। उसके बाद के त्रेता में ब्रह्मा हुए (वायु पुराण, ३१/३ आदि)। इस त्रेता में यज्ञ विज्ञान की उन्नति का वर्णन महाभारत, शान्ति पर्व (२३२/३१-३४), ब्रह्माण्ड पुराण, अध्याय (१/६), वायु पुराण, अध्याय ५७ आदि में है। सभ्यता का आरम्भ साध्य युग से हुआ जिनका उल्लेख पुरुष सूक्त के मन्त्रों (ऋक्, १०/९०/७,१६, वाज.यजु, ३१/९,१६ आदि) में है। इस युग में सिद्ध आयुर्वेद का आरम्भ हुआ जो दक्षिण भारत में प्रचलित है।

स्वायम्भुव मन्वन्तर के आरम्भ में ब्रह्मा के पुत्र अजित नाम के थे। स्वयम्भू के पुत्र जित तथा अजित थे। ये सभी शुक्र नाम से प्रसिद्ध थे। इन देवों के ३ गण थे-तृप्तिमन्त, तुषिमन्त, व्रजकुल। उस समय याम देवों ने विज्ञान का विकास किया।

तृप्तिमन्त गण में तीन गण थे-अजित, जित-अजित तथा जित गण। इनमें जित गण बाद में १२ कलावान् हुए, त्विषिमन्त शासन करते थे, वैश्य और कार्मिक वर्ग व्रजकुल नाम से प्रसिद्ध थे। (वायु पुराण, अध्याय ३१, ब्रह्माण्ड पुराण, अध्याय, २/३/३, नारद पुराण, अध्याय, १/१२१)

इन दो सभ्यताओं का बहुत काल के बाद नाश होने पर मणिजा सभ्यता का उदय हुआ। इसमें ४ मुख्य वर्ग थे-साध्य, महाराजिक, तुषित, आभास्वर जिनको बाद में ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र कहा गया। इस काल में खनिज निष्कासन, धातु कर्म आदि का विकास हुआ, जिसके कारण इसे मणिजा कहा गया है। इस काल की खानों के अवशेष पूरे विश्व में मिले हैं।

इस काल में लोकों की माप हो चुकी थी। इनके विषय में २ शब्दों का प्रयोग वेद तथा पुराणों में है-उत्तानपाद (यथा १० वर्ष का घटना क्रम देख कर कोटि वर्ष का अनुमान), प्रियव्रत (अन्तरिक्षों की माप)। इनको स्वायम्भुव मनु का पुत्र कहा गया है, किन्तु इस नाम के अन्य ब्रह्मा पुत्र उनके पूर्व भी वर्णित हैं। विष्णु पुराण (२/९/३१) में आकाश में पृथ्वी के उत्तर अक्ष दिशा में उत्तानपाद कहा है। इस समय में ध्रुव गति तथा नक्शा बनाने की विधि स्थिर हुई। भागवत पुराण (५/१/२१-३०) में सौर मण्डल की ग्रह कक्षाओं को प्रियव्रत रथ के चक्र से बना हुआ कहा है।

वेद में उत्तानपाद के २ अर्थ हैं-पृथ्वी से पैर उठा हुआ, पृथ्वी से आकाश निरीक्षण, या माप के विस्तार का अनुमान (Extrapolation) [५]

३. वेदाङ्ग ज्योतिष- वर्तमान काल में ३ प्रकार के वेदाङ्ग ज्योतिष मिलते हैं-ऋक् ज्योतिष, याजुष ज्योतिष, आथर्वण ज्योतिष। ऋक् ज्योतिष में १९ वर्ष का युग वर्णित है, इनमें ५ संवत्सर हैं तथा १४ अन्य ४ प्रकार के हैं- परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर, इद्वत्सर। याजुष ज्योतिष में ५ वर्ष के युग होते हैं। इसके ५ युग २५ वर्षों के होने

चाहिए किन्तु उनमें ६ क्षय वर्ष होते हैं, जिससे वे १९ वर्ष के ही युग हो जाते हैं। आथर्वण ज्योतिष मुहूर्त आदि के विषय में है। ऋक् तथा याजुष ज्योतिष का उद्देश्य है-चान्द्र वर्ष में कैसे अधिक मास जोड़ कर उसे सौर मास के समतुल्य बनाया जाय। ऋक् ज्योतिष के १९ वर्षीय युग में ७ अधिक मास होते हैं जो अर्ध वर्ष या अयन के बाद जोड़ते हैं। याजुष ज्योतिष में ५ सौर वर्ष में २ अधिक मास जोड़ते हैं। [७]

यह केवल चन्द्र सूर्य की नक्षत्र गणना के अनुसार चान्द्र-सौर वर्ष का समतुलन है, किन्तु वेद का अर्थ समझने के लिए वेदाङ्ग नहीं है-(१) इनमें कहा है कि वेद का प्रयोग यज्ञ के लिए है, यज्ञ काल के अनुसार होता है। किन्तु इससे यह पता नहीं चलता कि कौन यज्ञ कब किया जायेगा। (२) सौर मण्डल के ग्रह गति की माप आदि नहीं है। (३) वेद वर्णित लोकों की माप तथा सृष्टि सिद्धान्त नहीं है। इनके अवशेष श्रौत ग्रन्थों, पुराण तथा उनके काल माप पर आधारित सूर्य सिद्धान्त में मिलते हैं। वर्तमान सूर्य सिद्धान्त लगध का नहीं है, लगध के मूल ग्रन्थ का छोटा अंश हो सकता है। लेखक स्वयं को महात्मा नहीं कह सकते हैं। इसे महात्मा लगध के काल ज्ञान का अंश कहा गया है। [८]

यह मूल रूप से स्वायम्भुव मनु (मनुष्य ब्रह्मा) काल का है, जब अभिजित् नक्षत्र से वर्ष का आरम्भ होता था, अतः अभिजित् का स्वामी ब्रह्मा को कहा गया है। जब अभिजित् का पतन हुआ तब धनिष्ठा से वर्ष आरम्भ कार्त्तिकेय के समय हुआ। [९] दोनों में माघ मास से वर्ष का आरम्भ होता था। वर्तमान वेदाङ्ग ज्योतिष में वर्ष आरम्भ को श्रवण-धनिष्ठा का संयुक्त रूप श्रविष्ठा कहा है। [१०] अभिजित् पतन के बाद कार्त्तिकेय के समय धनिष्ठा से वर्षा का आरम्भ होगा, जो १५८०० ईपू की घटना है। कार्त्तिकेय ने क्रौञ्च द्वीप पर आक्रमण किया था, जिसका उल्लेख मेगास्थनीज (३०० ईपू) की इण्डिका के मूल संस्करण १८४६ में था कि भारत ने पिछले १५,००० वर्षों से अन्य देशों पर आक्रमण नहीं किया था। प्रायः ३,००० ईपू में जब नैमिषारण्य में वेद-पुराण का संकलन हुआ तब धनिष्ठा से उत्तरायण आरम्भ होता था।

४. कश्यप काल-कश्यप का समय १७५०० ईपू था जिसका निर्धारण कई प्रकार से है। इस समय पुनर्वसु नक्षत्र से वर्ष आरम्भ हुआ जिस समय सूर्य विषुव रेखा पर उत्तरायण गति में लम्ब होता था। यह दिव्य वर्ष (उत्तरायण आरम्भ) तथा असुर वर्ष (दक्षिणायन से आरम्भ-पृथ्वी के दक्षिण गोल के लिए) के बीच का वर्ष था (सूर्य सिद्धान्त, १/१४)। उस समय अदिति का युग था जो कश्यप पत्नी तथा देवमाता कही गयी है। अतः अदिति को पुनर्वसु का देवता कहा गया है। शान्ति पाठ में कहते हैं कि वर्ष के अन्त में अदिति का जन्म होता है तथा अदिति से नये वर्ष का जन्म। [११]

इसके अतिरिक्त कश्यप के बाद १० युगों (३६० x १० = ३६०० वर्ष) तक असुरों का प्रभुत्व रहा जिसके बाद वैवस्वत मनु का काल १३९०० ईपू में आरम्भ हुआ। [१२]

५. सूर्य सिद्धान्त परम्परा-इसका आरम्भ विवस्वान् से हुआ जो वैवस्वत मनु (१३९०० ईपू) के पिता थे। बहुत समय बीत जाने पर इसमें त्रुटि आरम्भ हुई। तब मयासुर ने सत्ययुग से अल्प (१३१ वर्ष, अ = १, ल = ३. प = १) समय पूर्व इसमें संशोधन किया। [१३]

यहां यह सन्देह होता है कि सूर्य सिद्धान्त में १२,००० दिव्य वर्षों का युग कहा गया है, पर १२,००० सौर वर्षों का युग क्यों मान रहे हैं-

(१) दिव्य वर्ष को सौर वर्ष भी कहा गया है। वायु तथा ब्रह्माण्ड पुराणों में सप्तर्षि वर्ष के २ प्रकार से मान हैं-२७०० दिव्य वर्ष या ३०३० मानुष वर्ष। मानुष वर्ष = चन्द्र परिक्रमा वर्ष = २७.३ दिन चन्द्र परिक्रमा x १२ = ३२७.५३६४ दिन।

३०३० मानुष वर्ष = २७१७ सौर वर्ष (३६५.२५ दिन का) [१४]

(२) ब्रह्मगुप्त तथा भास्कर-२ ने सूर्य सिद्धान्त परम्परा में ही आगम प्रोक्त १२,००० वर्ष के चक्र में बीज संस्कार (संशोधन) किया है। इस संशोधन का कारण है कि २६,००० वर्ष का अयन चक्र लेने के बदले उसमें मन्दोच्च के ३,१२,००० वर्ष का दीर्घकालिक चक्र मिला कर २४,००० वर्ष का अयनाब्द ले रहे हैं जिसमें १२,००० वर्ष के २ खण्ड हैं। [१५] यह वास्तविक हिमयुग का चक्र है। मन्दोच्च से अयन गति विपरीत होती है, अतः इनका संयुक्त चक्र है-

१/२६,००० + १/३१२००० = १/२४०००

(३) ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/६/१५-५२) के अनुसार जल प्रलय के समय इस युग का अन्त हुआ। जल प्रलय के समय मत्स्य अवतार हुआ था, जिस समय दोनों मत से प्रभव वर्ष था। सूर्य सिद्धान्त के अनुसार मध्यम गति से १ राशि में

गुरु गति को १ गौरव वर्ष कहते हैं जो प्रायः ३६१ दिन ४ घण्टे का है। इसमें ८५ सौर वर्ष में ८६ गुरु वर्ष होते हैं। पितामह सिद्धान्त में सौर वर्ष को ही गुरु वर्ष मानते हैं। अतः ६० वर्षों का सम्मिलित चक्र ८५ x ६० = ५१०० वर्ष में होगा। दोनों मत से प्रभव वर्ष मत्स्य अवतार के समय (९५३३ ईपू) तथा राम अवतार के समय (४४३३ ईपू) में हुआ था (विष्णु धर्मोत्तर पुराण, ८२/७-८)। जल प्रलय काल का आधुनिक अनुमान भी वही है। जल प्रलय के समय विषुव रेखा पर जल भार बढ़ जाता है, जिससे पृथ्वी का घूर्णन धीमा हो जाता है। दिन मान में अन्तर होने के कारण संशोधन करना पड़ता है।

कई दीर्घकालिक परिवर्तनों के कारण बहुत काल के बाद संशोधन करना पड़ता है। सूर्य सिद्धान्त के ४ दीर्घकालिक मान प्रायः १०,००० ईपू के हैं, जिसके बाद मय असुर ने संशोधन किया था-

(१) सूर्य सिद्धान्त (८/१०) में अगस्त्य तारा का स्थान ९० अंश पूर्व, ८० अंश दक्षिण है, जो १०,००० ईपू था।

(२) सूर्य सिद्धान्त (१/, २९, ३४) में महायुग में सूर्य भगण (परिक्रमा) ४३,२०,००० दिया है, अर्थात् इतने वर्ष का युग होता है। नक्षत्र भगण में यह संख्या घटाने से महायुग में दिन संख्या आती है। इसके अनुसार ३६५.२५६३६२७ दिन का वर्ष होता है। आधुनिक मान ३६५.२४२१९०४ दिन है। दिन को स्थिर मानने से सूर्य सिद्धान्त वर्ष बड़ा है। किन्तु वर्ष को स्थिर मानने से दिन मान छोटा होगा। वह दिन मान भी १०,००० ईपू में था। चन्द्र आकर्षण से समुद्र का जल ऊपर उठता है और वह घर्षण द्वारा पृथ्वी घूर्णन को धीमा करता है। चन्द्र धीरे धीरे दूर हो जाता है।

(३) पृथ्वी अक्ष का झुकाव २४ अंश है, जो १०,००० ईपू का है (सूर्य सिद्धान्त, २/२८)।

(४) पृथ्वी की दीर्घवृत्तीय कक्षा की च्युति भी उस काल की है (सूर्य सिद्धान्त, २/३४)।

सत्ययुग अन्त ९१०२ ईपू में हुआ था। उसके १३१ वर्ष पूर्व ९२३३ ईपू में संशोधन किया था। वर्तमान ग्रन्थ के लिखने के समय ज्योतिषीय या ऐतिहासिक युग का अन्तर भूल चुके थे। किन्तु गणना का आरम्भ सत्ययुग के अन्त से ही किया है। मयासुर द्वारा रोमकपत्तन (उज्जैन से ९० अंश पश्चिम) में संशोधन के कारण पूरे विश्व में राशि-नक्षत्र क्रम एक ही हो गया।

महाभारत के कुछ पूर्व पराशर ने सूर्य सिद्धान्त का उपदेश मैत्रेय को दिया था जिसका कुछ अंश विष्णु पुराण में है। सूर्य सिद्धान्त मत वालों के नाम भी सूर्य सम्बन्धित हैं- मैत्रेय, वराहमिहिर (मिहिर = सूर्य), भास्कर प्रथम और द्वितीय।

महाभारत के कुछ बाद वर्तमान सूर्य सिद्धान्त का संस्करण हुआ जिसके संक्षिप्त रूप का वर्णन वराहमिहिर की पञ्चसिद्धान्तिका में है।

६. आर्यभट काल -(१) आर्यभट ने अपना समय लिखा है कि वे जब २३ वर्ष के थे तब कलि में ६० वर्षों के ६ चक्र पूर्ण हुए। [१६] यहां 'षष्ट्यब्दानां षड्भिर्यदा' में षड्भिः तृतीया विभक्ति है, जो व्याकरण के अनुसार उचित है। पर ३६० कलि को ३६०० कलि करने के लिये षड्भिः को षष्टिः किया गया जो प्रथमा विभक्ति है, तथा व्याकरण से अशुद्ध है। गुणन में तृतीया विभक्ति होती है। आर्यभट ने स्पष्टतः कलि के निकट काल की चर्चा की है। उस काल में कलि वर्षों के बाद ६० वर्ष का चक्र जानना ही पर्याप्त था।

(२) यदि वे ३६०० कलि में होते, तो उनको जैन युधिष्ठिर शक (२६३४ ई.पू.), नन्द शक (१६३४ ई.पू.), शूद्रक शक (७५६ ई.पू.), चाहमान शक (६१२ ई.पू.-बृहत् संहिता १३/३), श्रीहर्ष शक (४५६ ई.पू.), विक्रम सम्वत् (५७ ई.पू.), शालिवाहन शक (७८ ई.), कलचुरि या चेदि शक (२१८ ई.) या वलभी भंग शक (३१९ ई.) में कम से कम किसी एक का ज्ञान रहता तथा गणना के लिये किसी निकटवर्त्ती शक का व्यवहार करते।

(३) आर्यभट का काल ३६० कलि से ३६०० कलि करने का उद्देश्य था उनको ग्रीक हिप्पार्कस के बाद का करना। इस कल्पना के आधार पर डेविड पिंगरी ने यह कहानी रची कि हिप्पार्कस की ज्या सारणी की नकल आर्यभट ने की थी। ऑक्सफोर्ड पद्धति थी कि भारतीय शास्त्रों के बिल्कुल विपरीत काल्पनिक कहानी गढ़ी जाय तथा ३ व्यक्ति परस्पर को उद्धृत करें। इसे मुण्डकोपनिषद् में 'परियन्ति मूढाः' कहा है, अर्थात् आपस के वृत्त में ही सन्दर्भ देते है, मूल शास्त्र के विषय में पूर्ण अविद्या है। डेविड पिंगरी इसमें सुधार कर स्वयं ४ झूठे लेख लिखते हैं जिसमें निराधार सम्भावना व्यक्त करते हैं तथा ५वें लेख में अपने झूठे लेखों को उद्धृत कर उसे प्रमाणित कर देते हैं। एक सम्मेलन में मैंने पिंगरी से पूछा कि हिप्पार्कस की ज्या सारणी किस पुस्तक में है? उनके अनुसार यह पुस्तक उपलब्ध नहीं है। उनसे अनुरोध किया कि

वे अब हिप्पार्कस के नाम से लिख दें। अपनी असमर्थता व्यक्त की कि वे ग्रीक नहीं जानते। यूरोप के नकली विद्वान् ग्रीक नहीं जानते, पर आर्यभट ने बिना ग्रीस गये ग्रीक सीख लिया था। वस्तुतः ग्रीक या रोमन अंक पद्धति में ज्या सारणी क्या, सामान्य भिन्न या वर्गमूल भी नहीं निकाल सकते।

(४) आर्यभट ने कुसुमपुर का उल्लेख किया है, जो शिक्षा केन्द्र था। उस समय पाटलिपुत्र नहीं बना था जो अजातशत्रु के पुत्र उदायि ने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में बनाया था।

(५) महाभारत के तुरन्त बाद मगध शक्ति केन्द्र था तथा ३६० कलि में वहां बार्हद्रथ वंशके नवम राजा महाबल (२७६९-२७३४ ईपू) का शासन था। ३६०० कलि में मगध में कोई स्वतन्त्र राज्य नहीं था जहां अश्मक या केरल से आकर आर्यभट आश्रय लेते।

(६) आर्यभट की सभी गणना महाभारत काल की है जिसका उन्होंने सन्दर्भ भी दिया है। [१८]

(७) आर्यभट तथा मय ज्योतिष में कई समानतायें हैं। ब्रह्माण्ड (गैलेक्सी) का आकार १८ अंक की संख्या होगी, यदि पृथ्वी व्यास १००० योजन मानते हैं। अतः दोनों में १८ अंक तक की संख्या का ही व्यवहार हुआ है। आर्यभट का सन्दर्भ कलि आरम्भ ३१०२ ईपू है, जब भगवान् श्रीकृष्ण स्वधाम गये थे। किन्तु बार्हस्पत्य वर्ष के चक्र का आरम्भ दक्षिण भारत के पितामह मत से ३११४ ईपू हुआ था। उसी समय को आधार मान कर मय लोगों ने ५१०० वर्ष के चक्र का कैलेण्डर बनाया था , जिसमें बार्हस्पत्य वर्ष के दोनों प्रकार के चक्र पूर्ण होते हैं।

(८) उस काल में कुसुमपुर केवल शिक्षा केन्द्र था, राज्य का केन्द्र राजगृह था। यह पाटलिपुत्र के रूप में उदायि के शासन के चतुर्थ वर्ष में ही राजधानी बना। उसके बहुत बाद होने पर वे कुसुमपुर के बदले पाटलिपुत्र का उल्लेख करते। [१९]

(९) बार्हस्पत्य वर्ष की सभी गणनायें तभी सूर्य सिद्धान्त जैसी होती हैं, यदि आर्यभटीय का काल ३६० कलि, वराहमिहिर, कालिदास और ब्रह्मगुप्त का काल विक्रमादित्य के समय माना जाये।

(१०) महासिद्धान्त में लिखा है कि महाभारत काल के समय २ मत प्रचलित थे-पाराशर मत तथा आर्य मत। उसके कुछ काल बाद आर्य मत की व्याख्या आर्यभट ने की। कुछ काल का अर्थ ३६०० वर्ष नहीं होता है। [१८]

(११) विक्रमादित्य के समकालीन वराहमिहिर ने पञ्चसिद्धान्तिका (१५/२०) में आर्यभट का उल्लेख किया है, अतः आर्यभट वराहमिहिर के ६०० वर्ष बाद नहीं हो सकते।

७. विक्रमादित्य काल-महाभारत के बाद भारत का सबसे प्रतापी तथा एकमात्र चक्रवर्ती राजा मालवा के परमार नरेश विक्रमादित्य थे। इनका संवत् अभी भी चल रहा है। अतः अंग्रेजों के इतिहास लेखन या नष्ट करने का एक मुख्य अंग है, विक्रमादित्य का अस्तित्व नहीं मानना। इनके अनुयायियों द्वारा १९५७ में चलाया गया तथाकथित राष्ट्रीय शक संवत् अभी तक नहीं चल पाया है। अतः अपने शत्रु विक्रम संवत् को बदलने की गम्भीर चेष्टा १८९० के बाद ४ बार हो चुकी हैं, तथा बार बार संशोधित कैलेण्डर बनाने की चर्चा होती है। चर्चा करने वालों की कठिनाई है कि वे कैलेण्डर का अर्थ नहीं समझते तथा विक्रम संवत् में क्या दोष है, यह नहीं पता। विक्रमादित्य का अस्तित्व अस्वीकार करने के मुख्य कारण हैं-

(१) उज्जैन प्राचीन काल के शून्य देशान्तर पर स्थित है। अतः प्रायः वहीं के राजा शक या संवत् का आरम्भ करते थे। भारतीय कालगणना स्वीकार करने पर इतिहास का झूठा कालक्रम निर्धारित नहीं हो सकता है। तथाकथित भारतीय विद्याभवन के १२ खण्ड के भारतीय इतिहास में अभी तक विक्रम संवत्, शालिवाहन शक जैसे शब्दों का प्रवेश नहीं हो सका है। इन लोगों के अनुसार केवल यूरोप के देश ही तिथि देते थे, जहां कोई प्राचीन कैलेण्डर नहीं था। ग्रीस में भी कोई कैलेण्डर नहीं था किन्तु सिकन्दर के समकालीन ग्रीक लेखकों को दिव्य दृष्टि से पता चल गया था कि सिकन्दर आक्रमण के ३२६ वर्ष बाद इसवी सन् आरम्भ होने वाला है।

(२) विक्रम संवत् के आधार पर ही भारत के पर्वों का पालन होता है। अतः भारतीय सभ्यता को पूरी तरह नष्ट करने के लिए विक्रम संवत् का विनाश आवश्यक है।

(३) विक्रमादित्य ने रोम के सम्राट् जुलियस सीजर को सीरिया के सेला में पराजित कर बन्दी बनाया था तथा ६ मास तक उज्जैन में रख कर छोड़ दिया था। इसका उल्लेख कालिदास के ज्योतिर्विदाभरण में होने के कारण इस पुस्तक को झूठा बहाना बना कर जाली घोषित किया गया है। किन्तु कठिनाई यह है कि इसी पुस्तक में उल्लेख है कि कालिदास ने ३ महाकाव्य भी लिखे थे। इस पुस्तक के नहीं रहने पर महाकवि कालिदास का ही अस्तित्व नहीं है। इसके उद्धरण

से अमेरिकी इतिहासकार विल डूरण्ट ने लिखा है कि सीजर के बन्दी होने को छिपाने के लिए रोमन इतिहासकारों ने ४ झूठी कहानियां बनायी थी। इसी पराजय के कारण ब्रूटस ने सीजर का वध किया था। [२०]

(४) स्वयं रोम में जुलियस सीजर के आदेश के अनुसार ४६ ईपू में कैलेण्डर आरम्भ नहीं हो पाया। वहां लोगों ने ७ दिन बाद वर्ष आरम्भ किया जब विक्रम संवत् १० का पौष मास आरम्भ हो रहा था। अलबरूनी की पुस्तक प्राचीन देशों की काल गणना के अनुसार अरब में पहले विक्रम संवत् चलता था तथा ६२२ ई में हिजरी सन भी विक्रम संवत् ६७९ के साथ आरम्भ हुआ। उसमें विक्रम संवत् के अनुसार ११ वर्षों तक अधिक मास की गणना हुई थी। [२१]

८. वराहमिहिर-यह विक्रमादित्य के नवरत्नों में थे तथा इनकी गणना के आधार पर ही विक्रम संवत् का आरम्भ हुआ था। विक्रम संवत् आरम्भ करने का कारण था कि कलि के ३०४४ वर्ष में ऋतु चक्र १.५ मास पीछे खिसक गया था। सूर्य सिद्धान्त (३/९-१०) के अनुसार अयनांश का मान २७ अंश से अधिक नहीं होना चाहिये। अतः नया संवत् आरम्भ हुआ जिसमें मास चक्र को १.५ मास पीछे किया गया। फलस्वरूप शुक्ल पक्ष के बदले कृष्ण पक्ष से मास आरम्भ किया गया। किन्तु वर्ष आरम्भ चैत्र शुक्ल पक्ष से रखा तथा अधिक मास गणना की पुरानी पद्धति ही रही।

वराहमिहिर ने कुतूहल मञ्जरी में अपनी जन्मतिथि युधिष्ठिर शक ३०४२ चैत्र शुक्ल अष्टमी (८-३-९५ ई.पू.) दी है। [२२]

वराहमिहिर ने अपने समय में प्रचलित शक (६१२ ई.पू.) का भी उल्लेख किया है। [२३]

अपना जन्म स्थान कपित्थक कहा है। बाद में उज्जयिनी के सम्राट् विक्रमादित्य के आश्रय में चले गये। [२४]

बृहत् संहिता के टीकाकार उत्पल भट्ट के अनुसार इनका देहान्त ९० वर्ष की आयु में अर्थात् ५ ई.पू. में हुआ। इसके ८३ वर्ष बाद ७८ ई. में शालिवाहन शक आरम्भ हुआ, जिसका प्रयोग वराहमिहिर द्वारा असम्भव है, जो वर्त्तमान इतिहासकारों की कल्पना है।

बृहत् संहिता में मकर राशि से सूर्य का उत्तरायण कहा है तथा उसी के अनुसार पञ्च सिद्धान्तिका में योग गणना लिखी है। [२५] वर्त्तमान उपलब्ध पुराणों में उत्तरायण आदि का यही आरम्भ लिखा है जो प्रमाणित करता है कि ये विक्रमादित्य काल के संस्करण हैं। [२६] यह पौलिश सिद्धान्त में भी है। [२७]

पञ्चसिद्धान्तिका में गणना का आरम्भ विन्दु ४२७ शक (१८५ ई.पू.) लिया गया है।

पञ्चसिद्धान्तिका, अध्याय १-सप्ताश्विवेद (४२७) संख्यं शककालमपास्य चैत्रशुक्लादौ।

अर्धास्तमिते भानौ यवनपुरे सौम्य दिवसाद्यः॥८॥

= शक ४२७ के चैत्र शुक्ल १ से गणना होगी जब सूर्य यवनपुर अर्ध अस्त था तथा सौम्य दिवस था (सोम= चन्द्र पुत्र बुध का वार)। वराहमिहिर की मृत्यु के ८३ वर्ष बाद शालिवाहन शक में यह गणना बैठाने के लिये शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित ने भौम = मंगलवार तथा थीबो ने सौम्य को सोमवार कर दिया। सूर्य सिद्धान्त में उज्जैन से ९०अंश पश्चिम रोमकपत्तन कहा गया है जिसे यवनपुर माना गया है। पर वराहमिहिर ने इसे उज्जैन (७५अंश ४३') से ७/२० घटी (४४ अंश) पश्चिम तथा वाराणसी (८३ अंश) से ९ घटी (५४ घटी) पश्चिम कहा है (पञ्चसिद्धान्तिका, ३/१३)। अतः यह सिकन्दरिया (३१ अंश १२' पूर्व) के निकट (यहां से ० अंश ३१' पूर्व) होना चाहिये। [२८]

नरसिंह राव के जगन्नाथ होरा सूत्र से गणना करने पर ६१२ ई.पू. तथा अन्य शकों से तिथि दी जाती है-

(१) ६१२ ई.पू. से १८-२-१८५ ई.पू. को चैत्र शुक्ल १ का आरम्भ १८ ता. को १०-१०-२४ बजे हुआ। उस दिन उज्जैन में ७-३६-३९ बजे सूर्योदय हुआ, अतः आरम्भ तिथि है-१७-२-१८५ ई.पू., बुधवार।

(२) ईरान राजा डेरियस का कल्पित ५५० ई.पू. (युधिष्ठिर के कलि २५ = ३०७६ ई.पू. में देहान्त से २५२६ की गणना, ईरान के राजा से मिलाने के लिये)-वास्तव में इसका राज्य ५२२-४८६ ई.पू. था।४२७ वर्ष बाद ५-३-१२४ ई.पू. को चैत्र शुक्ल १ का आरम्भ ६-४४-२४ बजे था जिसके कुछ समय बाद ६-५३-४४ बजे सूर्योदय हुआ। इस दिन शुक्रवार था।

(३) विक्रम सम्वत् ५७ ई.पू. से-यह सम्वत् है, शक नहीं। पर लोग शक और सम्वत् का अन्तर भूल चुके हैं, अतः इसमें भी गणना की जा रही है। ४२७ वर्ष बाद ४-३-३७१ ई. को २-१३-५४ बजे चैत्र शुक्ल १ आरम्भ हुआ, जिस दिन गुरुवार था।

(४) शालिवाहन शक ७८ ई. से-(क) गम्य ४२७ वर्ष में २०-२-५०५ को ८-८-०८ बजे चैत्र शुक्ल १ आरम्भ हुआ, अतः अगले दिन सोमवार से तिथि मानी जायेगी।

(ख) गत ४२७ वर्ष में ११-३-५०६ को ३-१४-५४ बजे शुक्रवार को चैत्र शुक्ल १ आरम्भ हुआ।

अतः ६१२ शक के अतिरिक्त अन्य किसी भी काल्पनिक या वास्तविक शक से गणना ठीक नहीं होती। अतः वराहमिहिर का ६१२ ई.पू. का शक ठीक है।

९. ब्रह्मगुप्त काल-ब्रह्मगुप्त ने स्वयं तथा अन्य लेखकों ने उनको जिष्णुसुत कहा है जो ज्योतिर्विदाभरण के अनुसार विक्रमादित्य के पण्डितों में थे। [२०] वराहमिहिर ने बृहज्जातक में भी उनका उल्लेख किया है। अतः उनके पुत्र ब्रह्मगुप्त भी वराहमिहिर के समकालीन थे और उसी शक (६१२ ई.पू.) का गणना के लिये प्रयोग करते थे। ब्रह्मगुप्त ने इसे चापवंश के राजा का शक कहा है। चौहान राजाओं को चपहानि या चापवंशी कहते थे। असीरियन इतिहास के अनुसार ६१२ ई.पू. में सिन्धु पूर्व के मध्यदेश के राजा ने असीरियन राजधानी निनेवे को ध्वस्त कर दिया था। इसका बाइबिल प्राचीन भाग में १८ बार उल्लेख है। [२९]

विक्रमादित्य ने नेपाल राजा अंशुवर्मन् (१०१-३३ ई.पू.) काल में पशुपतिनाथ में ५७ ई.पू. चैत्र शुक्ल १ को विक्रम सम्वत् आरम्भ किया था। ७ मास बाद सोमनाथ में कार्त्तिकादि विक्रम सम्वत् आरम्भ किया क्यों कि इस माह से समुद्री यात्रा आरम्भ होती थी जब समुद्री चक्रवात बन्द हो जाते थे। सोमनाथ से दक्षिणी ध्रुव की भूमि तक अन्य कोई भूभाग नहीं है। अंशुवर्मन् के पुत्र जिष्णुगुप्त भी ६ मास राजा थे, पर बाद में वे उज्जैन में ज्योतिष का अध्ययन करने लगे। हुएनसांग के अनुसार अंशुवर्मन् की प्रसिद्ध व्याकरण पुस्तक भी थी। उनके प्रसिद्ध होने के कारण ब्रह्मगुप्त का परिचय उनके पुत्र रूप में ही था। अंशुवर्मन के १३ लेख तिथि सहित हैं। विक्रम सम्वत् पूर्व की तिथियां ६१२ ई.पू. के चाप शक में हैं तथा सम्वत् आरम्भ होने के बाद की तिथि विक्रम सम्वत् में हैं। चाप शक तथा विक्रम सम्वत् के बीच श्रीहर्ष शक भी ४५६ ई.पू. में आरम्भ हुआ था जिसे कई लोगों ने थानेश्वर के राजा हर्षवर्धन (६०५-६४७ ई.) का शक माना है जो ११५० वर्ष बाद हुए तथा बाणभट्ट के हर्षचरित या हुएन सांग के अनुसार किसी भी शक का आरम्भ किया था। [३०] ब्रह्मगुप्त की पुस्तक ब्राह्म स्फुट सिद्धान्त के अनुसार हिजरी सन् की गणना होती थी अतः इसका अरबी में अल-जबर (ब्रह्म) उल-मुकाबला (स्फुट सिद्धान्त) के नाम से किया गया। अल-जबर से बीजगणित का अंग्रेजी नाम अलजबरा हुआ। अतः इस पुस्तक का काल हिजरी सन् के आरम्भ ६२२ ई के पूर्व होना चाहिए। शालिवाहन शक मानने से इसका काल ६२६ ई होता है जो असम्भव है।

कालिदास ने ज्योतिर्विदाभरण (१/२) के अनुसार वराहमिहिर प्रयुक्त शक का ही व्यवहार किया है। भारतीय ग्रन्थों के अनुसार काल मान लेने पर सूर्य सिद्धान्त, वराहमिहिर, आर्यभट, आदि सभी के अनुसार बार्हस्पत्य वर्ष की एक ही गणना होती है। अंग्रेजी जालसाजी के अनुसार ३ प्रकार की गणना होती है।

१०. भास्कराचार्य -दो भास्कराचार्य कहे गये हैं। भास्कराचार्य प्रथम की २ पुस्तकें हैं-लघु भास्करीय, महाभास्करीय। इसके अतिरिक्त आर्यभटीय पर उनकी संस्कृत टीका उपलब्ध है। भास्कराचार्य द्वितीय के ग्रन्थ हैं-सिद्धान्त शिरोमणि, करण कुतूहल, लीलावती, बीजगणितम्, बीजोपनयन।

भास्कर प्रथम ने आर्यभटीय (१/९) की टीका में कहा है कि कल्प आरम्भ से अभी तक १९८६१२३७३० वर्ष बीते हैं। इसमें कलि आरम्भ तक के वर्ष घटाने पर ३७३० वर्ष आता है जो आर्यभटीय टीका का काल है। कलि ३७३० = ६२९ ई।

भास्कर द्वितीय ने सिद्धान्त शिरोमणि, (गोलाध्याय, ५८) में कहा है कि १०३६ शक वर्ष में उनका जन्म हुआ तथा ३६ वर्ष की आयु में उन्होंने सिद्धान्त शिरोमणि लिखी। यदि शालिवाहन शक माना जाय तो उनका जन्म वर्ष १११४ ई है। करण कुतूहल का रचनाकाल ११०५ शक (११८३ ई) लिखा है। किन्तु १०३१ ई में अल बरूनि ने इसका समय १३२ वर्ष पूर्व अर्थात् ८९९ ई में लिखा है। भास्कराचार्य का जन्म स्थान आदि का ठीक वर्णन किया है। [३१] यदि श्री हर्ष शक का प्रयोग है, तो भास्कराचार्य का जन्म वर्ष (१०३६-४५५) = ५८१ ई होगा। ६१२ई पू के शक का प्रयोग करने पर उनका काल (१०३६-६११) = ४२५ ई होगा। इस स्थिति में वे ही प्रथम भास्कर हैं। यह असम्भव नहीं है, क्योंकि उन्होंने भास्करीय लेखक का उल्लेख नहीं किया है। दोनों निश्चित रूप से भिन्न हैं, क्योंकि एक ही विषय पर ३ पुस्तकें नहीं लिखते।

११. शोध काल-कई लोग शून्य आदि का आविष्कार आर्यभट द्वारा कहते हैं। केरल के कुछ लोगों ने वर्णन किया है कि वे पिता के मना करने पर भी १५ किलोमीटर समुद्र में निकल गये और तारा देख कर ज्योतिष में शोध किया। स्वयं आर्यभट ने सही लिखा है कि उन्होंने कोई शोध नहीं किया, बल्कि स्वायम्भुव मनु काल के ज्योतिष का नया संस्करण लिखा। भास्कर-१ की टीका के अनुसार महाभारत के बाद गणित की ४ शाखा उपलब्ध थीं, जिनसे आर्यभट ने गणित सूत्रों का संग्रह किया है-मस्करी, पूरन, पूतन, मुद्गल। आर्यभट की पुस्तक या सूर्य सिद्धान्त में उज्जैन या लंका से ९०

अंश पूर्व यमकोटिपत्तन, ९० अंश पश्चिम रोमक पत्तन तथा विपरीत दिशा में सिद्धपुर लिखा है। वे इन स्थानों पर कभी नहीं गये थे। जाने पर भी देशान्तर का पता नहीं चलता-सभी स्थानों पर सम्मिलित सर्वेक्षण की आवश्यकता थी जो विश्व के केन्द्रीय शासन या विदेशी शहयोग से ही सम्भव था। आर्यभट तथा लल्ल ने लिखा है कि उत्तरी ध्रुव जल भाग में तथा दक्षिणी ध्रुव स्थल भाग में है। यदि उनको दक्षिणी ध्रुव विमान से ले कर छोड़ भी देते तो उनको पता नहीं चलता कि वे ध्रुव पहुंचे या नहीं, या २ किमी बर्फ के नीचे जल है या स्थल। इसका पता १९८८ में ही चला था। १९०९ में जब नार्वे के ऐडमिरल पियरी उत्तर ध्रुव पहुंचे थे उसी वर्ष बाल गंगाधर तिलक ने पुस्तक लिखी थी-वेदों का आर्कटिक निवास। यह नहीं सोचा कि वहां भूमि नहीं थी। ग्रहों की दूरी और ब्रह्माण्ड का मान बहुत बड़ी बात है। आर्यभट के पास चन्द्र की दूरी निकालने का भी कोई साधन नहीं था। उनके स्थान पटना से भारत का सबसे दूर भाग कन्या कुमारी था। दोनों स्थानों से एक साथ चन्द्र को देखने पर उसकी दिशा में मात्र १/८ अंश का अन्तर होगा। यदि दोनों स्थानों के अक्षांश देशान्तर में १" की भूल हो, एक समय निर्धारण में १ सेकण्ड की भूल हो तथा चन्द्र की दिशा में भी १" भूल हो, तो चन्द्र दूरी के अनुमान में २०% से अधिक भूल होगी। समय एक ही है, उसका निर्णय कैसे हुआ?

१२. शक और संवत्सर-संवत्सर में चान्द्र तिथि की गणना होती है जिसके अनुसार पर्व होते है। समाज इसी के अनुसार चलता है, अतः यह संवत्सर है। चान्द्र तिथि क्रमागत दिनों में नहीं होती, अतः उसके निर्धारण के लिए दिनों की क्रमागत गणना के लिए अलग पद्धति है, जिसे शक कहते हैं। दिनों का संग्रह शक है। एक का प्रतीक कुश (खड़ी रेखा) है, १-१ दिन रूप कुश का संग्रह शक्तिशाली होता है, अतः इसे शक कहते हैं (शक्लृ शक्तौ, ५/१६ या षच् (सच्) समवाये, १/७२३)। दिन, सौर मास-वर्ष की गणना शक है। उसके अनुसार चान्द्र-तिथि, मास वर्ष का निर्धारण संवत् है। शक वर्ष का शक जाति से कोई सम्बन्ध नहीं है, अल बरूनि के अनुसार किसी भी शक राजा ने अपना कैलेण्डर नहीं आरम्भ किया था, वे सुमेरिया या ईरान का कैलेण्डर मानते थे। (Chronology of Ancient Nations)

विक्रमादित्य काल में ऋतु चक्र १.५ मास पीछे खिसक गया था अतः उसके अनुसार कृष्ण पक्ष से मास आरम्भ हुआ। इस संशोधन के बाद ज्योतिर्विदाभरण का काल बिल्कुल ठीक ३०६८ कलि आता है। बिना संशोधन यह ११६४ ई होगा जैसा बालकृष्ण दीक्षित ने भारतीय ज्योतिष के इतिहास (१८९६) में लिखा है। कालिदास और विक्रमादित्य का विरोध मुख्य उद्देश्य था, अन्य पुस्तकों में ऐसे ही वर्णन को स्वीकार किया है।

टिप्पणी-

[१] षड् विंशति सहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु।
वर्षाणां युगं ज्ञेयं दिव्यो ह्येष विधिः स्मृतः॥ (ब्रह्माण्ड पुराण, १/२/२९/१९)
स वै स्वायम्भुवः पूर्वं पुरुषो मनुरुच्यते। तस्यैकसप्तति युगं मन्वन्तरमिहोच्यते॥ (ब्रह्माण्ड पुराण, १/ २/९/३६,३७)
अष्टाविंश समाख्याता गता वैवस्वतेऽन्तरे। एते देवगणैः सार्धं शिष्टा ये तान्निबोधत॥७७॥
चत्वारिंशत् त्रयश्चैव भवितास्ते महात्मनः (स्वायम्भुवः)। अवशिष्टा युगाख्यास्ते ततो वैवस्वतो ह्ययम् ॥७८॥
(मत्स्य पुराण, अध्याय २७३)

[२] वराह पुराण, अध्याय ३३-३५-
अध्याय ३३-आदि कृत से पूर्व रुद्र सृष्टि-अनियमित, पशु जैसा समाज।
अध्याय ३४-पितृ सर्ग-महातपा द्वारा पितृ सर्ग की उत्पत्ति का वर्णन
अध्याय ३५-ब्रह्मा के मानस पुत्रों का वर्णन (अत्रि, सोम, दक्ष, ओषधि आदि)

[३] या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा (ऋक्, १०/९७/१, वाज. यजु, १२/७५ आदि)

[४] त्रेता युगमुखे पूर्वमासन् स्वायम्भुवेऽन्तरे। देवा यामा इति ख्याताः पूर्वं ये यज्ञसूनवः॥
अजिता ब्राह्मणः पुत्रा जिता जिदजिताश्च ये। पुत्राः स्वायम्भुवस्यैते शुक्र नाम्ना तु विश्रुताः॥
तृप्तिमन्तो गणा ह्येते देवानां तु त्रयः स्मृताः। तुषिमन्तो गणा ह्येते वीर्यवन्तो महाबलाः॥
ते वै ब्रजकुलाख्यास्तु आसन् स्वायम्भुवेऽन्तरे। कालेन बहुनाऽतीता अयनाब्दयुगक्रमैः॥ (वायु पुराण, ३१/३-२१)

कालेन बहुनातीतायनाब्द युगक्रमैः (वायु पुराण, ३१/२९)

स्वायम्भुवेऽन्तरे पूर्वमाद्ये त्रेता युगे तदा। (वायु पुराण, ३३/५)

ब्रह्माब्दस्य दिनत्रये । (भविष्य पुराण, प्रतिसर्ग, १/१/३)

[६] देवानां युगे प्रथमेसतः सदजायत। तदाशा अन्वजायन्त तदुत्तानपदस्परि॥२॥

भूर्जज्ञ उत्तानपादो भुव आशा अजायन्त।

अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाद्वदितिः परि॥३॥ (ऋक्, १०/७२/३-४)

[७] वेदाङ्ग ज्योतिष, प्रभाकर होले, नागपुर १९८९।

https://archive.org/details/VedangaJyotisha

[८] वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः, कालानुपूर्व्या विहिताश्च यज्ञाः।

तस्मादिदं कालविधान शास्त्रं, यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्। (याजुष ज्योतिष, ३)

कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि लगधस्य महात्मनः। (ऋक् ज्योतिष, २)

[९] अभिजित् स्पर्धमाना तु रोहिण्या अनुजा स्वसा। इच्छन्ती ज्येष्ठतां देवी तपस्तप्तुं वनं गता॥८॥
तत्र मूढोऽस्मि भद्रं ते नक्षत्रं गगनाच्युतम्। कालं त्विमं परं स्कन्द ब्रह्मणा सह चिन्तय॥९॥
धनिष्ठादिस्तदा कालो ब्रह्मणा परिकल्पितः। रोहिणी ह्यभवत् पूर्वमेवं संख्या समाभवत्॥१०॥
(महाभारत, वन पर्व, २३०/८-१०)

[१०] माघशुक्ल प्रपन्नस्य पौषकृष्ण समापिनः। युगस्य पञ्चवर्षस्य कालज्ञानं प्रचक्षते॥५॥
स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ। स्यात्तदादि युगं माघः तपः शुक्लोऽयनं ह्युदक्॥६॥
प्रपद्येते श्रविष्ठादौ सूर्याचन्द्रमसावुदक्। सार्पार्धे दक्षिणार्कस्तु माघश्रवणयोः सदा॥७॥
(ऋग् ज्योतिष, ३२, ५,६, याजुष ज्योतिष, ५-७)

[११] अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् (ऋक्, १/८९/१०, अथर्व, ७/६/१, वाज. यजु, २५/२३)

[१२] सख्यमासीत्परं तेषां देवनामसुरैः सह । युगाख्या दश सम्पूर्णा ह्यासीदव्याहतं जगत्॥६९॥

दैत्य संस्थमिदं सर्वमासीद्दशयुगं किल ॥९२॥ अशपत्तु ततः शुक्रो राष्ट्रं दश युगं पुनः ॥९३॥ (ब्रह्माण्ड पुराण, २/३/७२)

युगाख्या दश सम्पूर्णा देवापाक्रम्यमूर्धनि। तावन्तमेव कालं वै ब्रह्मा राज्यमभाषत॥ (वायु पुराण, ९८/५१)

[१३] अल्पावशिष्टे तु कृते मयो नाम महासुरः॥२॥
(तस्मात् त्वं स्वां पुरीं गच्छ तत्र ज्ञानम् ददामि ते।
रोमके नगरे ब्रह्मशापान् म्लेच्छावतार धृक्॥, पूना, आनन्दाश्रम प्रति)
शास्त्रमाद्यं तदेवेदं यत्पूर्वं प्राह भास्करः। युगानां परिवर्तेन कालभेदोऽत्र केवलम्॥९॥
[१४] त्रीणि वर्ष सहस्राणि मानुषेण प्रमाणतः ।
त्रिंशदधिकानि तु मे मतः सप्तर्षि वत्सरः॥ (ब्रह्माण्ड पुराण, १/२/२९/१६, वायु पुराण, ५७/१७)
सप्तविंशति पर्यन्ते कृत्स्ने नक्षत्र मण्डले ।
सप्तर्षयस्तु तिष्ठन्ते पर्यायेण शतं शतम्॥ (वायु पुराण, ९९/४१९, ब्रह्माण्ड पुराण, २/३/७४/२३१)
[१५] खाभ्रखार्कै (१२०००) हृताः कल्पयाताः समाः शेषकं भागहारात् पृथक् पातयेत्।
यत्तयोरल्पकं तद् द्विशत्या (२००) भजेल्लिप्तिकाद्यं तत् त्रिभिः सायकैः (५)॥
पञ्च पञ्चभूमिः (१५) करा (२) भ्यां हतं भानुचन्द्रेज्यशुक्रेन्दुतुङ्गेष्वृणम्।
इन्दुना (१) दस्रबाणैः (५२) करा (२)भ्यां कृतभौमसौम्येन्दुपातार्किषु स्वं क्रमात्। (सिद्धान्त शिरोमणि, भूपरिधि-७,८)
स्वोपज्ञ भाष्य-अत्रोपलब्धिरेव वासना। यद्वर्ष सहस्रषट्कं यावुपचयस्ततोऽपचय इत्यत्रागम एव प्रमाणं नान्यत् कारणं वक्तुं शक्यत इत्यर्थः।
ब्रह्मगुप्त-खखखार्क (१२०००) हृताब्देभ्यो गतगम्याल्पाः खशून्ययमल (२००) हृताः।
लब्धं त्रि (३) सायकं (५) हतं कलाभिरूनौ सदार्केन्दू ॥६०॥
शशिवत् जीवे द्विहतं चन्द्रोच्चे तिथि (१५) हतं तु सितशीघ्रे।
द्वीषु (५२) हतं च बुधोच्चे द्वि (२) कु (१) वेद हतं च पात कुज शनिषु॥६१॥

(ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त, सुधाकर द्विवेदी संस्करण, मध्यमाधिकार)

[१६] षष्ट्यब्दानां षड्भिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः। त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदेह मम जन्मनोऽतीताः॥१०॥

(आर्यभटीय, कालक्रिया पाद)

[१७] अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीरां पण्डितम्मन्यमानाः।
जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥

(मुण्डक उपनिषद्, १/२/८, कठोपनिषद्, १/२/५ में जङ्घन्यमानाः के बदले दन्द्रम्यमानाः है)

डेविड पिंगरी की धूर्तता का वर्णन रिचर्ड टामसन ने अपनी फुस्तक वेदिक कॉस्मोग्राफी ऐण्ड ऐस्ट्रोनौमी, १९८९ (पृष्ठ १८२-१९५) में किया है।

[१८] कुछ उदाररण। चान्द्रमास में पृथ्वी का अक्ष भ्रमण-

२००० ई -२७.३९६४६२८९, ५०० ई-२७.३९६४६५१४, १६०४ ईपू-२७.३९६४६९३६, आर्यभट मान-२७.३९६४६९३६

कल्पादेर्युगपादा ग च, गुरु दिवसाच्च, भारतात् पूर्वम्॥ (आर्यभटीय, १/५)
कलि संज्ञे युगपादे पाराशर्यं मतं प्रशस्तमतः।
वक्ष्ये तदहं तन्मम मततुल्यं मध्यमान्यत्र॥१॥
एतत् सिद्धान्तद्वयमीषद् याते कलौ युगे जातम्।
स्वस्थाने दृक् तुल्या अनेन खेटाः स्फुटाः कार्याः॥२॥
(महासिद्धान्त, अध्याय, २)

[१९] आर्यभटस्त्विह निगदति, कुसुमपुरेभ्यर्चितं ज्ञानम् (आर्यभटीय, १/१)

[२०] विक्रमार्कवर्णनम्-वर्षे श्रुति स्मृति विचार विवेक रम्ये श्रीभारते खधृतिसम्मितदेशपीठे।
मत्तोऽधुना कृतिरियं सति मालवेन्द्रे श्रीविक्रमार्क नृपराजवरे समासीत्॥७॥
नृपसभायां पण्डितवर्गा-शङ्कु सुवाग्वररुचिर्मणिरङ्गुदत्तो जिष्णुस्त्रिलोचनहरो घटखर्पराख्य।
अन्येऽपि सन्ति कवयोऽमरसिंहपूर्वा यस्यैव विक्रमनृपस्य सभासदोऽमो॥८॥
नवरत्नानि-धन्वन्तरि क्षपणकामरसिंहशङ्कुर्वेतालभट्ट घटखर्पर कालिदासा।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपते सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य॥१०॥
यो रुक्मदेशाधिपतिं शकेश्वरं जित्वा गृहीत्वोज्जयिनीं महाहवे।
आनीय सम्भ्राम्य मुमोच यत्त्वहो स विक्रमार्कः समसह्यविक्रमः॥१७॥
काव्यत्रयं सुमतिकृद्रघुवंशपूर्वं पूर्वं ततो ननु कियच्छ्रुतिकर्मवादः।
ज्योतिर्विदाभरणकालविधानशास्त्रं श्रीकालिदासकवितो हि ततो बभूव॥२०॥
वर्षैः सिन्धुरदर्शनाम्बरगुणै (३०६८) र्याते कलौ सम्मिते, मासे माधवसंज्ञिके च विहितो ग्रन्थक्रियोपक्रमः।
नानाकाल विधानशास्त्र गदित ज्ञानं विलोक्यादरा-दूर्जे ग्रन्थ समाप्तिरत्र विहिता ज्योतिर्विदां प्रीतये॥२१॥
(ज्योतिर्विदाभरण, अध्याय २२)

[२१] (१) History of the Calendar, by M.N. Saha and N. C. Lahiri (part C of the Report of The Calendar Reforms Committee under Prof. M. N. Saha with Sri N.C. Lahiri as secretary in November 1952-Published by Council of Scientific & Industrial Research, Rafi Marg, New Delhi-110001, 1955, Second Edition 1992.

Page, 168-last para-“Caesar wanted to start the new year on the 25th December, the winter solstice day. But people resisted that choice because a new moon was due on January 1, 45 BC. And some people considered that the new moon was lucky. Caesar had to go along with them in their desire to start the new reckoning on a traditional lunar landmark.”

(२) The Chronology of Ancient Nations by Al Biruni, translated by C. Edward Sachau, 1879- page 73.

[२२] वराहमिहिर-कुतूहल मञ्जरी-स्वस्ति श्रीनृप सूर्यसूनुज-शके याते द्वि-वेदा-म्बर-त्रै (३०४२) मानाब्दमिते त्वनेहसि जये वर्षे वसन्तादिके।
चैत्रे श्वेतदले शुभे वसुतिथावादित्यदासादभूद् वेदाङ्गे निपुणो वराहमिहिरो विप्रो रवेराशीर्भिः॥

[२३] बृहत् संहिता (१३/३)-
आसन् मघासु मुनयः शासति पृथ्वीं युधिष्ठिरे नृपतौ। षड्-द्विक-पञ्च-द्वि (२५२६) युतः शककालस्तस्य राज्ञस्य॥
= पृथ्वी पर जब युधिष्ठिर का शासन था तब सप्तर्षि मघा नक्षत्रमें थे। उनका शक जानने के लिये वर्त्तमान शक में २५२६ जोड़ना होगा।

[२४] वराहमिहिर-बृहज्जातक, अध्याय २८-उपसंहार-
आदित्यदास तनयस्तदवाप्त बोधः कापित्थके सवितृलब्धवरप्रसादः।
आवन्तिको मुनिमतानवलोक्य सम्यग् घोरां वराहमिहिरो रुचिरां चकार॥९॥

[२५] वराहमिहिर-बृहत् संहिता (३/१-२)-आश्लेषार्द्धाद्दक्षिणमुत्तरमयनं रवेर्धनिष्ठाद्यम्।
नूनं कदाचिदासीद्येनोक्तं पूर्वशास्त्रेषु॥१॥
साम्प्रतमयनं सवितुः कर्कटकाद्यं मृगादितश्चान्यत्। उक्ताभावो विकृतिः प्रत्यक्षपरीक्षणैर्व्यक्तिः॥२॥
= प्राचीन ग्रन्थों में आश्लेषा के मध्य (११३ अंश २०') से सूर्य का दक्षिणायन तथा धनिष्ठा से उत्तरायण कहा है। आजकल (वराहमिहिर काल मे) ये कर्क आरम्भ (९० अंश) तथा मकर राशि के आरम्भ (२७० अंश) से आरम्भ होते हैं जो प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

[२६] विष्णु पुराण (२/८/६८-६९), श्रीमद् भागवत पुराण, (५/२१/३-४), अग्नि पुराण, (१२२/१४-१६), ब्रह्माण्ड पुराण, (१/२/२१/१४४-१४६) आदि।

[२७] पञ्चसिद्धान्तिका, अध्याय ३ (पौलिश सिद्धान्त)-
अर्केन्दुयोगचक्रे वैधृतमुक्तं दशर्क्ष सहिते (तु) । यदि च(क्रं) व्यतिपातो वेला मृग्या (युतैः भोगैः॥२०॥
आश्लेषार्धादासीद्यदा निवृत्तिः किलोष्णकिरणस्य। युक्तमयनं तदाऽऽसीत् साम्प्रतमयनं पुनर्वसुतः॥२१॥
= सूर्य-चन्द्र के अंशों का योग ३६० अंश पर वैधृति योग होता है जब सूर्य-चन्द्र की क्रान्ति समान किन्तु विपरीत गोल में होती है। १० नक्षत्र (१३३ अंश २०') व्यतीपात योग होता है जब सूर्य चन्द्र की क्रान्ति समान होती है, पर वे क्रान्ति वृत्त के विपरीत भाग में होते हैं। यह तभी सम्भव है जब आश्लेषा के मध्य (११३ अंश २०') से दक्षिणायन आरम्भ हो जो अभी पुनर्वसु (कर्क राशि इसके चतुर्थ पाद से) से होता है।

[२८] पञ्च सिद्धान्तिका (३/१३)-पौलिश सिद्धान्त-
यवनान्तरजा नाड्यः सप्ताऽवन्त्यां त्रिभाग संयुक्ताः। वाराणस्यां त्रिकृतिः साधनमत्र वक्ष्यामि॥१३॥
सूर्यास्त से सूर्योदय तक सूर्य अस्त रहता है, इसका अर्ध भाग मध्यरात्रि है। यवन पुर में मध्यरात्रि होने पर उज्जैन में सूर्योदय होगा।

[२९] ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त, मध्यमाधिकार (१/२)-
ब्रह्मोक्तं ग्रहगणितम् महताकालेन यत् खिलीभूतम्। अभिधीयते स्फुटं तज्जिष्णुसुत ब्रह्मगुप्तेन॥
वटेश्वर सिद्धान्त-ब्राह्म-स्फुटसिद्धान्त परीक्षणाध्याय
दिव्यशास्त्रमपहाय यदन्यत् प्राह जिष्णुतनयो निज बुद्ध्या।
ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त (२४/७-८)
श्रीचापवंशतिलके श्रीव्याघ्रमुखे नृपे शकनृपाणाम्। पञ्चाशत् संयुक्तैर्वर्षशतैः पञ्चभिरतीतैः॥
ब्राह्मः स्फुटसिद्धान्तः सज्जनगणितज्ञगोलवित् प्रीत्यै। त्रिंशद्वर्षेन कृतो जिष्णुसुतब्रह्मगुप्तेन॥
भविष्य पुराण, प्रतिसर्ग पर्व (१/६)-
एतस्मिन्नेवकाले तु कान्यकुब्जो द्विजोत्तमः। अर्बुदं शिखरं प्राप्य ब्रह्महोममथाकरोत्॥४५॥
वेदमन्त्रप्रभावाच्च जाताश्चत्वारि क्षत्रियाः। प्रमरस्सामवेदी च चपहानिर्यजुर्विदः॥४६॥

[३०] अंशुवर्मन के लेख इस वेबसाईट पर हैं-

http://indepigr.narod.ru/licchavi/content81.htm

(१) लेख ६९-सम्वत् ५३५ श्रावण शुक्ल ७ (यदि यह ४५६ ई.पू. के श्रीहर्ष शक में हो तो ७९ वर्ष होगा जो उनकी मृत्यु के ११२ वर्ष बाद का है)। अतः यहां चाप शक मे अनुसार ७७ ई.पू. का लेख है, विक्रम सम्वत् आरम्भ से २० वर्ष पूर्व का।

(२) लेख ७६-सवत् २९, ज्येष्ठ शुक्ल १० (इसके बाद की तिथियां विक्रम सम्वत् में)

(३) लेख ७७-सम्वत् ३०, ज्येष्ठ शुक्ल ६।

(४) लेख ७८-सम्वत् ३१ प्रथम (मास नाम लुप्त, अगले लेख के अनुसार पौष) पञ्चमी-इस वर्ष पौष में अधिक मास था।

(५) लेख ७९-सम्वत् ३१ द्वितीय पौष शुक्ल अष्टमी।

(६) लेख ८०-सम्वत् ३१, माघ शुक्ल १३।

(७) लेख ८१-सम्वत् ३२, आषाढ़ शुक्ल १३।

(८) लेख ८३-सम्वत् ३४-प्रथम पौष शुक्ल २-अधिक मास का वर्ष।

(९) लेख ८४-सम्वत् ३६-आषाढ़ शुक्ल १२।

(१०) लेख ८५-सम्वत् ३७, फाल्गुन शुक्ल ५।

(११) लेख ८६-सम्वत् ३९, वैशाख शुक्ल १०।

(१२) लेख ८७-सम्वत् ४३-व्यतीपात योग, ज्येष्ठ कृष्ण (तिथि लुप्त)।

(१३) लेख ८९-सम्वत् ४५-ज्येष्ठ शुक्ल (तिथि लुप्त)

[३१] Astronomical Dating of The Mahabharata War, by E. Vedavyasa, pages 229-232. अलबरूनि का भारत, अध्याय ४९

[३२] सदसज्ज्ञानसमुद्रात् समुद्धृतं ब्रह्मणः प्रसादेन। सज्ज्ञानोत्तमरत्नं मया निमग्नं स्वमतिनावा॥४९॥
आर्यभटीयं नाम्ना पूर्वं स्वायम्भुवं सदा नित्यम्।
सुकृतायुषोः प्रणाशं कुरुते प्रतिकञ्चुकं योऽस्य॥५०॥ (आर्यभटीय, गोलपाद)

आर्यभटीय, भास्कर व्याख्या (१/१)-इति व्यवहार गणितस्या-ष्टाभिधायिन-श्चत्वारि बीजानि प्रथम-द्वितीय-चतुर्थानि यावत्-तावद्वर्ग-अवर्ग-घन-अघन-विषमाणि। एतद् एकैकस्य ग्रन्थ लक्षण लक्ष्यं मस्करि-पूरण-मुद्गल-प्रभृतिभि-राचार्यै-र्निबद्धंकृतं, स कथं अनेना-चार्येणा-ल्पेनग्रन्थेन शक्यते वक्तुम्।

गणितपाद (२/९)-यस्माद्गणित विदो मस्करि-पूरण-पूतनादयः सर्वेषां क्षेत्राणां फलं-आयत-चतुरश्र क्षेत्रे प्रत्याय यन्ति।

मस्करि- Algorithm (successive approximation), पूरण (Integral calculus), पूतन (Differential calculus, Rectification), मुद्गल (Discrete mathematics)